भारत सरकार

राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था आयोग

भारतीय संविधान के अंतर्गत अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थाओं के संबंध में अल्पसंख्यक दर्जे, मान्यता, संबद्धता तथा इनसे जुड़े मामलों के निर्धारण हेतु दिशा-निर्देश

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 30(1) भाषाई तथा धार्मिक अल्पसंख्यकों को अपनी पसंद के शैक्षणिक संस्थाएं स्थापित तथा संचालित करने का अधिकार प्रदान करता है। इन अधिकारों के उल्लंघन के विरुद्ध निषेधाज्ञा द्वारा इन्हें संरक्षण प्रदान किया जाता है। यह निषेधाज्ञा संविधान के अनुच्छेद 13 में निहित है जिसमें यह घोषणा की गई है कि मौलिक अधिकारों का हनन करने वाली कोई भी विधि ऐसे उल्लंघन की सीमा तक अमान्य जानी जाएगी। यह सुस्थापित है कि अनुच्छेद 30(1) को संकीर्ण तथा विद्याडम्बर भाव से नहीं पढ़ा जा सकता तथा मूल अधिकार होने के नाते इसे व्यापक अर्थों में लिए जाना चाहिए। अनुच्छेद 30(1) की व्यापकता में ऐसे विचारों के समावेश के कटौती नहीं की जा सकती जो इसमें प्रतिष्ठापित अधिकार के तत्व को नष्ट करते हो।

राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था अधिनियम (संक्षेप में 'अधिनियम') संविधान के अनुच्छेद 30(1) में प्रतिष्ठापित अल्पसंख्यकों के शैक्षणिक अधिकारों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए अधिनियमित किया गया है।

टी.एम.ए.पाई फाउंडेशन बनाम कनार्टक राज्य (2002) 8 एससीसी 481 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय की 11 न्यायाधीश वाली खंडपीठ द्वारा यह निर्णय दिया गया है कि कोई भी अल्पसंख्यक, चाहे वे भाषायी अथवा धार्मिक हों, का निर्धारण उस राज्य की जनसांख्यिकी के संदर्भ में किया जाता है न कि समूचे देश की जनसंख्या को

ध्यान में रखकर। पंजाब, जम्मू-कश्मीर तथा नागालैंड जैसे राज्यों में धर्म संबंधी सांख्यिकी परीक्षण लागू करने पर पता चलता है कि इन राज्यों में क्रमशः सिक्ख धर्म, इस्लाम तथा ईसाई धर्म की बहुलता है। (डी ए वी कालेज बनाम पंजाब राज्य ए आई आर 1971 एससी 1731 देखें)

जहां तक अल्पसंख्यक दर्जा प्रमाण पत्र प्रदान करने के लिए निर्धारित किए जाने वाले सूचकांक का संबंध है, अधिनियम की धारा 2(छ) का संदर्भ देना अनिवार्य हो गया है क्योंकि यह अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था को परिभाषित करती है। धारा 2(छ) इस प्रकार है:-

"अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था" से (किसी विश्वविद्यालय से भिन्न) कोई महाविद्यालय या संस्था अभिप्रेत है, जो अल्पसंख्यकों में से किसी व्यक्ति या व्यक्ति समूह द्वारा स्थापित या अनुरक्षित हो"

धारा 2(छ) में 'स्थापित' तथा 'अनुरक्षित' अभिव्यक्तियों का प्रयोग विधायिका द्वारा किया गया है 'अथवा' शब्द सामान्यता वियोजक है तथा 'और' शब्द सामान्यतया वियोजक है तथा 'और' शब्द सामान्यतया संयोजक (हैदराबाद एस्बेस्टोज सीमेन्ट प्रोडक्ट बनाम भारत संघ 2000(1) एससीसी 426 देखें) परन्तु कभी-कभी विधायिका के प्रकट आशक को प्रभावी बनाने के लिए इसे विलोमतः भी पध जाता है जैसा कि परिपे्रक्ष्य से प्रकट होता है (ईश्वर सिंह बिन्द्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य ए आई आर 1968 एस सी 140; एमसीडी दिल्ली बनाम टेक चंद भाटिया ए आई आर 1980 एस सी 360 देखें)

अज़ीज़ बाशा बनाम भारत संघ ए आई आर 1968 एससी 662 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय की संवैधानिक पीठ ने यह निर्णय दिया कि अनुच्छेद 30(1) में प्रयुक्त अभिव्यक्ति 'स्थापना' तथा 'संचालन' को संयोजक रूप में पढ़ा जाना था

अर्थात यह कह सकते हैं कि अनुच्छेद 30(1) के अंतर्गत दो अपेक्षाएं पूरी करनी होती है नामतः यह कि संस्थान की स्थापना समुदाय द्वारा की गई तथा इसका संचालन समुदाय में निहित है। एस.पी. मित्तल बनाम भारत संघ ए आई आर 1983 एस सी 1, के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि अनुच्छेद 30(1) के लाभ का दावा करने के लिए समुदाय को यह दर्शाना अनिवार्य है, (क) कि यह धार्मिक/भाषाई अल्पसंख्यक है, (ख) कि संस्थान की स्थापना इसके द्वारा की गई। इन दो शर्तों को पूरा किए बिना वह इसके संचालन के प्रत्याभूत अधिकारों का दावा नहीं कर सकता। अतः राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था अधिनियम की धारा 2(छ) में अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था की परिभाषा में मौजूद 'अथवा' शब्द संयुक्त रूप में पढा जाना होगा जैसा कि इस परिप्रेक्ष्य से पता चलता है कि यह विधायिका का आशय था।

सेंट स्टीफेंस कालेज बनाम दिल्ली विश्वविद्यालय (1992) एससीसी 558 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह घोषित किया कि सेंट स्टीफेंस कालेज इस आधार पर अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था है कि इसकी स्थापना तथा संचालन ईसाई समुदाय के सदस्यों द्वारा किया गया था। अतः यही वो संकेत थे कि अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान का दर्जा तय करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित किए गए थे और इन्हें अधिनियम की धारा 2(छ) में समाविष्ट भी किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 30(1) की यह अभिधारणा है कि धार्मिक अथवा भाषायी अल्पसंख्यक सदस्यों को अपनी पसंद की शैक्षणिक संस्था संस्थापित तथा संचालित करने का अधिकार है। संतोषजनक साक्ष्य प्रस्तुत करना ही इस मामले का प्रमाण है कि अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा ही संबंधित संस्था की स्थापना की गई जो इसके संचालन के तथ्य का प्रमाण प्रस्तुत किया जाए। इसकी जिम्मेदारी उस व्यक्ति की बन जाती है जो यह दावा करता है कि अमुक संस्था अल्पसंख्यक

संस्था है। टी.के.वी.टी.एस. मेडिकल एजुकेशन तथा चेरिटेबल ट्रस्ट बनाम तमिलनाडु राज्य ए एआईआर 2002 मद्रास 42 के मामले में मद्रास उच्च न्यायालय की डिविजन खंडपीठ द्वारा यह निर्णय दिया गया 'कि यदि एक बार यह सिद्ध हो जाता है कि संस्था किसी भाषाई अल्पसंख्यक द्वारा स्थापित की गई और वह अल्पसंख्यक द्वारा संचालित की जाती है तो ऐसी स्थिति में यह संविधान के अनुच्छेद 30(1) के अंतर्गत प्रत्याभूत मूल अधिकार का दावा करने के लिए पर्याप्त माना जाएगा।' यही सिद्धांत धार्मिक अल्पसंख्यक पर भी लागू होता है। आन्ध्र प्रदेश क्रिस्टियन मेडिकल एसोसिएशन बनाम आन्ध्र प्रदेश सरकार ए आई आर 1986 एससी 1490 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि सरकार, विश्वविद्यालय और अंततः न्यायालय इस दावे की जांच कर सकते हैं कि विचाराधीन संस्था एक अल्पसंख्यक संस्था है तथा इस बात की 'जांच पड़ताल करके अपनी संतुष्टि कर सकते हैं कि किया गया दावा उचित है अथवा अनुचित।' एक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था को अल्पसंख्यक संस्था के रूप में घोषित करती है तो उस समय वह सिर्फ एक तथ्यात्मक स्थिति को मान्यता देती है कि एक अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा की स्थापना कर इसका संचालन किया जा रहा है। यह घोषणा उस संस्था के कानूनी स्वरूप को खुली स्वीकृति देना मात्र है जिसने ऐसी घोषणा पाने के लिए आवश्यक पूर्ववृत्त प्रस्तुत किए हैं (एन.अहमद बनाम एमजे हाई स्कूल (1998) 6 एससीसी 674)।

अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्यों वाली एक सोसायटी अथवा न्यास अथवा अल्पसंख्यक समुदाय का कोई एक सदस्य भी, संस्था की स्थापना कर सकता है। इस स्थिति को केरल राज्य बनाम मदर प्रविन्शियल ए आई आर 1970 एससी 2079 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्पष्ट किया गया है। सर्वोच्च न्यायालय ने पाया:

'स्थापना से तात्पर्य संस्थान के अस्तित्व में लाने से है तथा यह अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा की जाए। इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि एकमात्र लोकोपकारी व्यक्ति अपने साधनों से संस्था की स्थापना करें अथवा समूचे रूप में समुदाय निधियों का अंशदान करें। कानून भी यही कहता है परन्तु किसी भी स्थिति में उस समुदाय के किसी सदस्य द्वारा संस्थान की स्थापना अल्पसंख्यक समुदाय के लाभ के आशय से होनी चाहिए। यहां यह इस अधिकार के लिए उतना ही अप्रासंगिक है कि अल्पसंख्यक समुदाय के अतिरिक्त अन्य अल्पसंख्यक समुदायों के सदस्य अथवा बहुमत समुदाय तक का कोई सदस्य इन संस्थाओं का लाभ उठा सकता है।'

(बल दिया गया)

क्रिश्चियन एसोसिएशन (ऊपर) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी निर्णय दिया कि 'महत्वपूर्ण क्या है और अनिवार्य क्या है, से संबंधित कुछ ऐसे वास्तविक अभिसूचक होने चाहिए जिससे अल्पसंख्यकों के शैक्षणिक संस्थान के रूप में किसी संस्था की पहचान की जा सके।' यहां तक कहने की आवश्यकता नहीं कि संविधान के अनुच्छेद 30(1) में अधिष्ठापित अधिकार अल्पसंख्यकों के हितों का संरक्षित तथा सवंर्धित करके उन्हें लाभ प्रदान करने के लिए ही बने हैं। संस्था तथा उस अल्पसंख्यक समुदाय विशेष के बीच आपस में संबंध होना चाहिए जिससे जुडे होने का वह दावा करता है। किसी शैक्षणिक संस्था का संचालन करने के लिए अल्पसंख्यक समुदाय का दावा करने का अधिकार, उस संस्था की स्थापना के प्रमाण पर निर्भर करता है। पी.ए. ईनामदार बनाम महाराष्ट्र राज्य (2005) 6 एससीसी 537, के मामले में निम्नलिखित प्रश्न विचारार्थ सामने आएः

1- क्या किसी अल्पसंख्यक द्वारा स्थापित कोई अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था केवल उन्हीं अल्पसंख्यक की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है ?

2- क्या ऐसे व्यक्ति अथवा व्यक्तियों की पहचान करने के लिए जांच की जा सकती है जिन्होंने वास्तव में संस्था की स्थापना की है ?

3- क्या अल्पसंख्यक संस्था सीमा पार अथवा अंतर्राज्यीय शैक्षणिक सुविधाएं प्रदान कर सकता है और इसके बावजूद भी अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था के स्वरूप को बनाए रख सकता है?

ईनामदार के मामले में यह निर्णय दिया गया कि 'अल्पसंख्यक संस्थाएं, गैर अल्पसंख्यक समुदाय के विद्यार्थियों तथा अन्य राज्यों से भी अपने समुदाय के सदस्यों दोनों सहित अपनी पसंद के विद्यार्थियों का प्रवेश केवल सीमित सीमा तक करने के लिए स्वतंत्र है और यह प्रवेश ऐसे रूप तथा ऐसी सीमा तक न हो कि जिससे उसका अल्पसंख्यक शैक्षणिक दर्जा ही समाप्त हो जाए। यदि वे ऐसा करते हैं तो वे संविधान के अनुच्छेद 30(1) का संरक्षण खो देंगे।'

केरल शिक्षा विधेयक ए आई आर 1958 एससी 956 में यह निर्णय लिया गया कि 'अनुच्छेद 29(2) तथा 30(1) को एक साथ पढ़ने पर स्पष्ट रूप से यह समझ में आता है कि अल्पसंख्यक संस्थान में 'छिट फुट बाहरी व्यक्तियों' को प्रवेश देने की अपेक्षा की गई है। अल्पसंख्यक संस्था में गैर अल्पसंख्यक सदस्य का प्रवेश इसके स्वरूप को नष्ट नहीं करता तथा अल्पसंख्यक संस्था का अस्तित्व भी समाप्त नहीं होता।'

यह ध्यान में रखा जाए कि अनुच्छेद 30(1) के अंतर्गत प्रत्याभूत अधिकार व्यक्तियों को नहीं परन्तु धार्मिक सम्प्रदाय अथवा ऐसे सम्प्रदाय के वर्ग को प्रदान किए जाते हैं। सार्वभौमिक रूप से यह भी माना गया है कि अपने बच्चों को अपनी

पसंद के शैक्षणिक संस्था में शिक्षा दिलाना माता पिता का पैतृक अधिकार है। कर्नाटक के प्राइमरी और सैकेण्डरी स्कूलों के संबद्ध प्रबंधन बनाम कर्नाटक राज्य एवं अन्य 2008 के एल जे। (पूर्ण पीठ) मामले में कर्नाटक उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा यह निर्णय दिया गया कि 'शैक्षणिक संस्थानों' को विशेषता बताने वाला 'अपनी पसंद' शब्द व्यापक विवेकाधिकार तथा विकल्प दर्शाता है कि जो अल्पसंख्यकों को उस संस्था के स्वरूप का चयन करने में प्राप्त है जिसे वे स्थापित करना चाहते हैं।'

यहां यह कहने की आवश्यकता नहीं कि किसी संस्था की स्थापना अपनी स्थापना के उद्देश्य में सहायक होने तथा उस उद्देश्य में आगे बढ़ने के लिए की जाती है। जबकि अल्पसंख्यकों को इस इच्छा से अपनी पसंद के शैक्षणिक संस्थान स्थापित तथा संचालित करने का अधिकार है कि उनके बच्चे समुचित ढंग से पढ़लिख कर उच्च शिक्षा के योग्य बने तथा ऐसी बौद्धिक उपलब्धियों के साथ बाहरी दुनिया में जाएं जिससे वे जन सेवा में प्रवेश के योग्य बन सकें, तब अपने समुदाय के बच्चों की आवश्यकताओं की व्यवस्था करने के लिए सदृश कर्तव्य इन मूल अधिकारों में निश्चित रूप से अंतर्निहित होने चाहिए। ऐसे मूल अधिकार लाभार्थी को इसका पूरा लाभ उठाने की अनुमति होनी चाहिए। अतः अपनी पसंद की शैक्षणिक संस्था से उस अल्पसंख्यक समुदाय की आवश्यकताएं निश्चित रूप से पूरी होंगी जिसने यह संस्था स्थापित की है।

राज्य सहायता की प्राप्ति मात्र से अनुच्छेद 30(1) के तहत प्रत्याभूत अधिकार समाप्त नहीं होते। पी.ए.ईनामदार (ऊपर) के मामले में यह निर्णय दिया गया कि 'कोई संस्था अपना अल्पसंख्यक संस्था का दर्जा उसी क्षण नहीं खो देती जब उसने सहायता अनुदान प्राप्त किया है। इस प्रकार एक सहायता प्राप्त अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था अल्पसंख्यक विद्यार्थियों को उचित सीमा तक प्रवेश देने की

अपेक्षा भी होगी ही परन्तु साथ ही साथ उससे गैर अल्पसंख्यक विद्यार्थियों को उचित सीमा तक प्रवेश देने की अपेक्षा भी होगी ताकि अनुच्छेद 30(1) के तहत अधिकारों को पर्याप्त रूप में हानि न पहुँचे और साथ ही अनुच्छेद 29(2) के तहत नागरिक अधिकारों का भी उल्लंघन न हो। यह उचित सीमा क्या होगी, यह अलग-अलग तरह की शैक्षणिक संस्थाओं, शिक्षा पाठ्यक्रमों जिसके लिए प्रवेश मांगा जा रहा है तथा शैक्षणिक आवश्यकताओं जैसे अन्य घटकों के अनुसार अलग-अलग होगी। संबंधित राज्य सरकार को उपर्युक्त टिप्पणियों के दृष्टिगत प्रवेश दिए जाने के लिए अल्पसंख्यक विद्यार्थियों का प्रतिशत अधिसूचित करना होता है।'

पी.ए. ईनामदार (ऊपर) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशें ने आगे यह पाया कि अनुच्छेद 30(1) में उल्लिखित उद्देश्य अल्पसंख्यकों की इच्छाओं को पूरा करने से है कि उनके बच्चे समुचित ढंग से पढ़-लिख कर उच्च विश्वविद्यालय शिक्षा के लिए पात्रता प्राप्त करें तथा ऐसी बौद्धिक उपलब्धियों के साथ बाहरी दुनिया में जाएं जो उन्हें लोक सेवा में प्रवेश दिलाने, सामान्य धर्मनिरपेक्ष शिक्षा सहित उच्च अनुदेश देने वाली शैक्षणिक संस्थाओं के योग्य बनाए। अतः अल्पसंख्यकों के हित में अनुच्छेद 30(1) द्वारा प्राप्त किए जाने वाले अपेक्षित दो उद्देश्य इस प्रकार है: (1) इन्हें इस योग्य बनाना कि वे अपने धर्म तथा भाषा का संरक्षण कर सके, तथा (2) इन अल्पसंख्यक के बच्चों को संपूर्ण अच्छी सामान्य शिक्षा प्रदान करना। जब तक संस्था उपर्युक्त दो उद्देश्यों को प्राप्त कर और प्राप्त करते हुए अपना अल्पसंख्यक स्वरूप बनाए रखती है तब तक संस्थान अल्पसंख्यक संस्था ही बनी रहेगी।'

सेंट स्टीफेंस मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया था कि अनुच्छेद 30(1) केवल धार्मिक तथा भाषायी अल्पसंख्यकों के लाभ के लिए एक संरक्षी उपाय

है तथा कोई भी 'अयोग्य अथवा छदम संस्थान संवैधानिक संरक्षण का लाभ प्राप्त नहीं कर सकता।'

अनुच्छेद 30(1) के तहत संरक्षण के विशेषाधिकार का लाभ उठाने के प्रयोजन से इसका अल्पसंख्यक स्वरूप बना रहने की आवश्यकता के महत्व को समझते हुए यह जरूरी है कि संस्थान की स्थापना का उद्देश्य निष्फल न हो। अल्पसंख्यक संस्था का प्रबंधन, संस्था के अल्पसंख्यक दर्जे को बनाए रखने के लिए साथ के राज्य के ऐसे अल्पसंख्यक विद्यार्थियों को युक्तिपूर्वक प्रवेश दिलाने का सहारा नहीं ले सकता जो उस राज्य में बहुलता में है। इस संबंध में टी.एम.ए.पाई (ऊपर) के मामले में की गई निम्नलिखित टिप्पणियों का संदर्भ दिया जा सकता है:

"..... यदि ऐसा है तो ऐसी संस्था का यह दायित्व होता है कि अल्पंसख्यक समुदाय के खांचे में फिट आने वाले अधिकांश विद्यार्थियों को प्रवेश दे। अतः जिस राज्य में संस्था स्थापित है वहां रह रहे उस समूह के विद्यार्थियों को बड़ी संख्या में प्रवेश अनिवार्य होगा क्योंकि जहां तक उस राज्य का संबंध है वे उस भाषाई अल्पसंख्यक समूह का निर्माण करते हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि जिस राज्य में अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान स्थापित है उस राज्य से भाषाई अल्पसंख्यक विद्यार्थियों की प्रधानता होनी चाहिए। ऐसे संस्थानों के प्रबंधन निकाय अनुच्छेद 30(1) के अंतर्गत दिए गए संरक्षण की आड़ में साथ के राज्यों के भाषायी विद्यार्थियों, जो वहां बहुलता में है, को प्रवेश देने के उपाय का सहारा नहीं ले सकते।"

ईनामदार मामले में (ऊपर) कानून का उक्त प्रस्ताव धार्मिक अल्पसंख्यक पर लागू किया गया है। माननीय न्यायधीशों के अनुसार 'यदि कोई अन्य दृष्टिकोण अपनाया गया होता तो सुव्यवस्थित अर्थ रखने वाले अनुच्छेद 30(1) तथा 29(2) के

द्वारा प्रवेश का प्राथमिक अधिकार प्रदान करने वाला उद्देश्य ही विकृत हो जाता।' ईनामदार मामले मं आगे यह पाया गया कि टी.एम.ए.पाई फाउंडेशन में निर्धारित कानून द्वारा अनिवार्य रूप से यह परिणाम मिलता है कि अल्पसंख्यक संस्थान की स्थापना करने के लिए संस्थान को उस राज्य के अल्पसंख्यकों की आवश्यकताओं को प्राथमिक आधार पर पूरा करना चाहिए अन्यथा इसके अल्पसंख्यक संस्थान होने का स्वरूप ही नष्ट हो जाता है। हालांकि केरल शिक्षा विधेयक में मुख्य न्यायाधीश के शब्दों में व्यक्त किया जाए तो 'अन्य राज्यों से बहुसंख्यक छिट फुट प्रवेश उसी आधार पर देना जैसा कि गैर अल्पसंख्यक छात्रों को दिया गया है, तो यह अनुमतः होगा और इससे संस्था उस राज्य की एक ईकाई के रूप में देखे जाने पर अल्पसंख्यक संस्थान होने के नाते अपनी मूल विशेषता से भी वंचित नहीं होगी।'

जहां तक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान में प्रवेश को नियंत्रित करने वाली प्रतिशतता निर्धारण का संबंध है टी एम ए पाई फाउंडेशन मामला बनाम कर्नाटक राज्य (2002) 8 एससीसी 481 में सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों की निम्न टिप्पणियों का उदाहरण उपयोगी होगा।

'..... संस्थान के प्रकार तथा शिक्षा पद्धति जो उस संस्थान में प्रदान की जा रही है कि अनुसार परिस्थिति अलग-अलग होगी। यद्यपि सामान्यता स्कूल स्तर पर अल्पसंख्यक समूह के विद्यार्थियों से पूरी सीटें भरना संभव हो सकता है परन्तु उच्च स्तर पर कालेज अथवा तकनीकी संस्थानों में अल्पसंख्यक समूह के विद्यार्थियों से सभी सीटें भर पाना संभव नहीं हो सकता। हालांकि अल्पासंख्यक समूह के विद्यार्थियों से ये सीटें भरना संभव हो तो उसी क्षण जब संस्थान को सहायतानूदान प्राप्त हो जाता है तो संस्थान को गैर अल्पसंख्यक समूह के विद्यार्थियों को उचित सीमा तक प्रवेश देना होगा जिससे संस्थान का स्वरूप

समाप्त न हो तथा साथ ही अनुच्छेद 29(2) के तहत उल्लिखित नागरिक अधिकारों का हनन भी न हो।'

राज्य सरकार उस क्षेत्र, जहां संस्थान स्थापित है, की आबादी तथा शैक्षणिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान में प्रवेश दिए जाने वाले अल्पसंख्यक समुदाय का प्रतिशत निर्धारित कर सकती है। प्राइमरी से कालेज स्तर तक शैक्षणिक संस्थाओं के प्रकार के संबंध में तथा समूचे राज्य के लिए कोई सामान्य नियम अथवा विनियम अथवा व्यवस्था नहीं हो सकती जिसमें अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थानों में विद्यार्थियों के प्रवेश के मामले में एक समान सीमा निर्धारित की जा सकती है। अतः दो उद्देश्यों के बीच एक संतुलन रखना होगा- अल्पसंख्यकों के इस अधिकार को बनाए रखना कि वे अपनी संस्थाओं में अपने समुदाय के विद्यार्थियों को प्रवेश दें और साथ ही 'छिट पुट बाहरी व्यक्तियों को भी इस शर्त पर प्रवेश दे सकें कि प्रवेश के तरीके तथा उसकी संख्या से संस्थान के अल्पसंख्यक स्वरूप का उल्लंघन न हो। यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि अधिनियम की धारा 12ग(ख) राज्य सरकार को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान में प्रवेश पर नियंत्रण रखने के लिए प्रतिशत निर्धारित करे। अतः टी एम ए पाई फाउंडेशन तथा पी ए ईनामदार (ऊ) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों द्वारा प्रतिष्ठापित उपर्युक्त विधि सिद्धांतों के अनुसार राज्य सरकार को अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थानों में विद्यार्थियों के प्रवेश पर नियंत्रण रखने के लिए प्रतिशत निर्धारित करना होता है।

पी.ए. ईनामदार (ऊ) मामले के तर्क में महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान मुख्य रूप से अल्पसंख्यकों के लाभ के लिए है। अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था की विद्यार्थी संख्या में छिट पुट गैर अल्पसंख्यक विद्यार्थियों के प्रवेश की अपेक्षा केवल इस बाहय उद्देश्य पूरा करने के लिए की जाती है जो या

तो अतिरिक्त वित्तीय स्रोत प्राप्त करने के लिए हो या सांस्कृतिक शिष्टाचार निभाने के लिए। अतः अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान में विद्यार्थी संख्या का एक बड़ा हिस्सा अल्पसंख्यक समुदाय से होना चाहिए। शिक्षा के व्यवसायीकरण के संदर्भ में अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था की विद्यार्थी संख्या के गठन के बारे में जांच करने पर पता चलेगा कि क्या पी.ए. ईनामदार से प्राप्त किए जा सकने वाले महत्वपूर्ण बाहय फार्मूले का उचित रूप से पालन किया जाता है या फिर अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान पैसा उगाहने का मोहरा मात्र है।

यहां यह उल्लेख किए जाने की आवश्यकता है कि केन्द्रीय शैक्षणिक संस्थान (प्रवेश के आरक्षण) अधिनियम 2006 की धारा 2(च) अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान को इस प्रकार परिभाषित करती है:-

"अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थाओं" से संविधान के अनुच्छेद 30 के खण्ड (1) के तहत अल्पसंख्यकों द्वारा स्थापित और संचालित और संसद के एक अधिनियम द्वारा अथवा केन्द्रीय सरकार द्वारा ऐसी घोषित अथवा अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था अधिनियम 2004 के राष्ट्रीय आयोग के अंतर्गत अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था के रूप में घोषित एक संस्था अभिप्रेत है;

सर्वोच्च न्यायालय की अनेक प्राधिकृत उदषोघणाओं तथा अधिनियम की धारा 2(छ) में अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान की परिभाषाओं तथा केन्द्रीय शैक्षणिक संस्थान (प्रवेश में आरक्षण) अधिनियम 2006 के साथ संविधान के अनुच्छेद 30(1) का पठन करने के बाद धार्मिक आधार पर शैक्षणिक संस्थान को अल्पसंख्यक दर्जा प्रदान करने के लिए निम्नलिखित तथ्य सिद्ध होने चाहिए:

1- कि कोई शैक्षणिक संस्था धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय के किसी सदस्य/सदस्यों द्वारा स्थापित हो;

2- कि शैक्षणिक संस्था अल्पंसख्यक समुदाय के लाभ के लिए स्थापित हो;

3- यह कि शैक्षणिक संस्था का संचालन अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा किया जा रहा हो।

उपर्युक्त तथ्यों को सीधे अथक परिस्थितिक साक्ष्य द्वारा प्रमाणित किया जा सकता है। इसमें कुछ ऐसे सकारात्मक संकेत होने चाहिए जिससे शैक्षणिक संस्था की धार्मिक अल्पसंख्यकों के साथ पहचान की जा सके। इसमें उपयोग किए जाने वाले साधनों तथा इच्छित उद्देश्यों के बीच संबंध होना चाहिए। यदि संबंधित शैक्षणिक संस्था किसी न्यास अथवा पंजीकृत सोसायटी द्वारा चलाई जा रही है, तो न्यास अथवा सोसायटी के अधिकांश सदस्य, जैसा भी मामला हो, अल्पसंख्यक समुदाय से होने चाहिए तथा इस संबंध में विधिवत् प्रतिपादित न्यास दस्तावेज/संघ के अंतर्नियम अथवा अन्य किसी प्रलेखों से अल्पसंख्यक समुदाय के हितोपयोगी लक्ष्य परिलक्षित होने चाहिएं। दस्तावज संबंधी कोई प्रमाण उपलब्ध न होने पर उपर्युक्त तथ्यों को प्रमाणित करने के लिए कुछ स्पष्ट अथवा कुछ निश्चायक प्रमाण प्रस्तुत करने चाहिए। अपनी पसंद के शैक्षणिक संस्थान स्थापित करने के लिए किसी अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्य को अन्य समुदाय के सदस्य को अन्य समुदाय के सदस्यों द्वारा मदद दिए जाने पर कोई रोक नहीं है। (एस.के. पात्रों बनाम बिहार राज्य ए आई आर 1970 एससी 259 देखेँ)

जैसे कि टी.के.वी.टी.एस.एस. मेडिकल एजुकेशन तथा चेरिटेबल ट्रस्ट बनाम तमिलनाडु राज्य ए आई आई 2002 मद्रास 42 के मामले में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा यह निर्णय दिया गया कि अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान को अल्पसंख्यक दर्जा किसी ड्राइविंग लाइसेंस की तरह समय-समय पर नवीकृत की जाने वाली विशेष अवधि के लिए प्रदान नहीं किया जा सकता। अल्पसंख्यक

शैक्षणिक संस्थान को अल्पसंख्यक दर्जा देने वाले पूर्व आदेश की समीक्षा करने की छूट राज्य सरकार को नहीं है जब तक कि यह पता न चले कि संबंधित संस्थान ने अल्पसंख्यक दर्जा प्राप्त करने संबंधी आदेश पारित होते समय कोई तथ्य छुपाया अथवा परिस्थितियों में ऐसा मूल परिवर्तन हो गया है जिससे पूर्व के आदेश को निरस्त करना जरूरी हो जाता है। इस संबंध में माननीय न्यायाधीशों की निम्नलिखित टिप्पणियों का संदर्भ दिया जा सकता है:-

"..... निष्कर्षतः, हम मानते हैं कि यदि भारत के संविधान के अनुच्छेद 30(1) के तहत परिकल्पित अधिकारों के अंतर्गत किसी निकाय को अल्पसंख्यक संस्थान घोषित किया जाता है तो जब तक कि परिस्थतियों में मूल परिवर्तन न हो अथवा तथ्यों को छुपाया न गया हो तो सरकार को ऐसे महत्वपूर्ण संवैधानिक अधिकार जो कि मौलिक अधिकार है को प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप सुनवाई की उचित प्रक्रिया अपनाए महज पत्र के जरिए छीनने की शक्ति प्राप्त नहीं है।"

(बल दिया गया)

अब यह सुस्थापित है कि सिविल महत्व वाले कोई भी प्रशासनिक आदेश कड़ाई से प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप पारित किए जाने होते हैं (एआई आर 1978 एससी 851 देखें)। यदि अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान को प्रदान किए गए अल्पसंख्यक स्तर को रद्द करने संबंधी कोई आदेश, शैक्षणिक संस्थान को सुनवाई का मौका दिए बिना परित किया गया हो तो इसे अमान्य माना जाता है।

यदि अल्पसंख्यक दर्जा प्रमाण पत्र धोखाधडी से अथवा कोई तथ्य छुपाकर प्राप्त किया गया हो अथवा परिस्थितियों में ऐसा मूल परिवर्तन हो गया है जिनके कारण

पूर्व के आदेश का निरस्तीकरण करना जरूरी है तो संबंधित प्राधिकरण अपनी शक्तियों के भीतर प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप संबंधित संस्थान के प्रबंधन को सुनवाई का मौका देने के बाद अल्पसंख्यक दर्जा रद्द कर सकेगा।

यहां यह ध्यान देगा भी संगतपूर्ण है कि आयोग द्वारा अथवा किसी प्राधिकरण द्वारा प्रदान किया गया अल्पसंख्यक दर्जा प्रमाणपत्र अधिनियम की धारा 12 ग के तहत उल्लिखित किसी भी शर्त के उल्लंघन पर रद्द किया जा सकता है। धारा 12 ग इस प्रकार है:

12 ग. रद्द करने की शक्ति: आयोग किसी ऐसी अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था को, जिसे यथाशक्ति, किसी प्राधिकारी या आयोग द्वारा अल्पसंख्यक परिस्थिति प्रदान की गई है, सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर देने के पश्चात, निम्नलिखित परिस्थितियों के अधीन ऐसी परिस्थिति को रद्द कर सकेगा, अर्थात्:

(क) यदि शैक्षणिक संस्था की संरचना, लक्ष्यों और उद्देश्यों को, जिन्होंने उसे अल्पसंख्यक परिस्थिति अभिप्राप्त करने में समर्थ बनाया है, बाद में इस रूप में संशोधित किया गया है कि वे उस रूप में अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था के प्रयोजन या विशेषता को प्रदर्शित नहीं करते हैं:

(ख) यदि निरीक्षण या अन्वेषण के दौरान अभिलेखों के सत्यापन पर यह पाया जाता है कि अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था किसी शैक्षणिक वर्ष के दौरान नियमों और प्रवेश को शासित करने वाली विहित प्रतिशतता के अनुसार अल्पसंख्यक समुदाय के छात्रों को संस्था में प्रवेश देने में असफल रही है।

(बल दिया गया)

संविधान के अनुच्छेद 246 तथा 254 द्वारा संसदीय सर्वोच्यता प्रदान की गई है। संविधान के इन अनुच्छेदों के आदेश को देखते हुए राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान अधिनियम 2004 केन्द्रीय प्रविधि होने के नाते राज्य प्रविधि से ऊपर माना जाएगा। राज्य सरकार कार्यकारी आदेश जारी करके अधिनियम के किसी प्रावधान में जोड़ने, परिवर्तन करने अथवा आशोधन करने संबंधी कोई कार्य नहीं कर सकती (ग्रेटर बाम्बे को ओप.बैंक लि. बनाम मैं. यूनाइटेड यार्न टेक्स. प्रा. लि. तथा अन्य जेटी 2007 (5) एससी 201 देखें)।

संबद्धता तथा मान्यता

हालांकि संविधान के अनुच्छेद 30(1) में ऐसी स्थितियों का उल्लेख नहीं है जिसके तहत अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था की विश्वविद्यालय के साथ संबद्धता हो सकती है परन्तु फिर भी अनुच्छेद की प्रकृति में यह अर्थ समाविष्ट है कि जहां संबद्धता मांगी जाती है, वहां संबंधित विश्वविद्यालय बिना किसी पर्याप्त कारण के अथवा ऐसी शर्तें लागू करने के प्रयास द्वारा जिनसे शैक्षणिक संस्थान का स्वायत्त प्रशासन पूरी तरह नष्ट हो जाता हो, संबद्धता के लिए मना नहीं कर सकता।

अधिनियम की धारा 10क अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था को अपनी पसंद के किसी विश्वविद्यालय के साथ संबद्धता का अधिकार प्रदान करती है। धारा 10 क निम्नवत है:

”10क अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था की सहबद्धता चाहने का अधिकार। (1) कोई अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था अपनी पसंद के किसी विश्वविद्यालय से इस बात के अधीन रहते हुए सहबद्ध होने का मांग कर सकेगी कि ऐसी सहबद्धता उस

अधिनियम के भीतर अनुज्ञेय है, जिसके अधीन उक्त विश्वविद्यालय स्थापित किया गया है।

(2) कोई व्यक्ति, जो अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किया गया है, उपधारा (1) के अधीन सहबद्ध होने के लिए किसी विश्वविद्यालय को कोई आवेदन, उस विश्वविद्यालय के परिनियम, अध्यादेश, नियमांे या विनियमों द्वारा विहित रीति में फाइल कर सकेगा;

परन्तु ऐसे प्राधिकृत ऐसे व्यक्ति को आवेदन करने की तारीख से साठ दिन की अवधि की समाप्ति के पश्चात् ऐसे आवेदन की स्थिति जानने का अधिकार होगा।"

मान्यता एक सुविधा है जो राज्य शैक्षणिक संस्था को प्रदान करता है। कोई शैक्षणिक संस्था, राज्य सरकार की मान्यता के बिना नहीं चल सकती। मान्यता के बिना शैक्षणिक संस्था केन्द्र सरकार द्वारा कार्यान्वित की जा रही विभिन्न लाभकारी योजनाओं से मिलने वाले लाभ का फायदा नहीं उठा सकती। संबद्धता भी एक सुविधा है जो एक विश्वविद्यालय एक शैक्षणिक संस्था को प्रदान करता है। मैनेजिंग बोर्ड, आफ द मिली तालीमी मिशन बिहार एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य 1984(4) एससीसी 500 में सर्वोच्च न्यायालय ने यह स्पष्ट रूप से माना है कि अल्पसंख्यक संस्था चलाना भी उतना ही मौलिक अथवा महत्वपूर्ण है जितना देश के नागरिकों को दिए गए अन्य अधिकार। यदि अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था को कोई उचित तथा पर्याप्त आधार बताए बिना राज्य सरकार उसे मान्यता देने तथा विश्वविद्यालय ही संबद्धता प्रदान करने से मना करता है तो इसके सीधे परिणाम यह होंगे कि कि संस्था का अपना अस्तित्व ही खत्म हो जाएगा। अतः संविधिक प्राधिकारियों द्वारा बिना किसी उचित तथा पर्याप्त आधार के मान्यता

अथवा संबद्धता देने से मना करना संविधान के अनुच्छेद 30(1) के तहत प्रत्याभूत अधिकार का उल्लंघन माना जाएगा।

यदि संबद्धता अथवा मान्यता देने से मना किया जाता है तो ऐसी स्थिति में अपनी पसंद की शैक्षणिक संस्था स्थापित करने के अल्पसंख्यक अधिकार का कोई अर्थ नहीं रह जाएगा। सेंट जेवियर कालेज, अहमदाबाद बनाम गुजरात राज्य 1974(1) एससीसी 717 में सर्वोच्च न्यायालय की संवैधानिक पीठ द्वारा यह निर्णय दिया गया कि सामान्य धर्म निरपेक्ष शिक्षा प्रदान करने के मामले में अल्पसंख्यक संस्थाओं के अधिकार में 'संबद्धता उसका वास्तविक तथा सार्थक उपयोग होनी चाहिए' कोई प्रविधि जो ऐसी शर्तों पर संबद्धता प्रदान करती हो जिससे अपनी पसंद की शैक्षणिक संस्थाएं स्थापित तथा संचालित करने के भाषाई तथा धार्मिक अल्पसंख्यकों के अधिकार में कमी होती हो, तो वह अनुच्छेद 30(1) का उल्लंघन मानी जाएगी। अल्पसंख्यकों द्वारा स्थापित शैक्षणिक संस्थाओं में यदि लड़के एवं लड़कियों को विश्वविद्यालय डिग्रियों के लिए प्रशिक्षित नहीं किया जा सका तो ऐसी संस्थाएं अपनी उपयोगिता खो देंगी। वास्तव में, अल्पसंख्यक अपने बच्चों को सामान्य जीवन वृत्ति के लिए तैयार करने के अपने इस अधिकार को खो देंगे, यदि संबद्धता शर्तों पर हो जिससे उन्हें अनुच्छेद 30 के तहत अपनी पसंद की शैक्षणिक संस्था स्थापित तथा संचालित करने के अपने अधिकार त्यागने अथवा खोने ने पड़े। संबद्धता का प्रथम उद्देश्य यह है कि अल्पसंख्यक संस्थाओं में पढ़ने वाले विद्यार्थी ऐसी डिग्रियों के रूप में अर्हताएं प्राप्त करें जो उनकी जीवन वृत्ति के लिए नितांत उपयोगी हो। विद्यार्थियों को डिग्री प्रदान करने के प्रयोजनार्थ जब तक ऐसी संस्था को विश्वविद्यालय की संबद्धता प्रदान नहीं की जाती, जब तक अल्पसंख्यक संस्था की स्थापना न केवल अप्रभावी बल्कि अवास्तविक भी होती है। टी.एम.पाई फाउंडेशन (ऊपर) के मामले में यह निर्णय दिया गया कि ऐसी

प्रत्येक संस्था के लिए संबद्धता तथा मान्यता उपलब्ध हो जो ऐसी संबद्धता तथा मान्यता की शर्तें पूरी करता हो।

संविधान के अनुच्छेद 30(1) के तहत अपनी पसंद की शैक्षणिक संस्था स्थापित तथा संचालित करने के अल्पसंख्यकों के अधिकार शिक्षा के स्तर की उत्कृष्टता बनाए रखने तथा उसे सुसाध्य बनाने के लिए राज्य की विनियामक शक्ति के अधीन हैं। इस संबंध में पी.ए.ईनामदार बनाम महाराष्ट्र राज्य के मामले में सर्वोच्च न्यायालय की संवैधानिक पीठ द्वारा दिए गए स्पष्ट निर्णय में न्यायाधीशों की निम्न टिप्पणियों को देखा जा सकता है।

”121. संबंद्धता या मान्यता देने के लिए सक्षम कोई राज्य या बोर्ड या विश्वविद्यला इसके लिए इंकार मात्र इस आधार पर नहीं कर सकता कि संस्था एक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था है। हालांकि संबद्धता अथवा मान्यता के लिए अनुरोध अथवा आवश्यकता से मेरिट, उत्कृष्ट शिक्षा, कुप्रशासन से बचाव सुनिश्चित करने की जरूरत के अनुरूप शर्तें निर्धारित कर विनियम की संकल्पना भी सामने आती है। उदाहरण के तौर पर ऐसे प्रावधान बनाए जा सकते हैं जिनमें शिक्षकों की न्यूनतम शिक्षा, जो उनके पास अवश्य हो, निर्धारित करके उनके स्तर और अध्ययन और पाठयक्रम निर्धारित किए जाएं। संस्था के विकास के लिए पर्याप्त मूलभूत ढांचे की उपलब्धता का निर्धारण, संबद्धता अथवा मान्यता प्रदान करने की पूर्वापेक्षा के रूप में निर्धारित की जा सकती है। हालांकि रोजमर्रा के प्रशासन में कोई हस्तक्षेप नहीं हो सकता। विद्यार्थियों का प्रवेश, स्टाफ की भर्ती, वसूल की जाने वाली फीस की मात्रा सहित प्रबंधन के अनिवार्य घटक विनियमित नहीं किए जा सकते।

122. विधि की इस सामान्य स्थिति के अलावा कि संचालन के अधिकार में कुप्रशासन का अधिकार शामिल नहीं है, संबद्धता या मान्यता प्रदान करने के प्रावधान के साथ-साथ विनियमन करने के अतिरिक्त अधिकार के रूप में कुछ शर्ते भी मौजूद हैं। इन दोनों उद्देश्यों के बीच एक संतुलन बनाना होगा। (1) कि संस्था के उत्कृष्टता का स्तर सुनिश्चित किया जा सके और (2) अल्पसंख्यकों को अपनी शैक्षणिक संस्था स्थापित तथा उसका संचालन करने के अधिकार को बरकरार रखा जा सके। दोनों उद्देश्यों के सामंजस्य के अधीन, संबंद्धता या मान्यता के साथ जुडे किसी विनियम को तिहरी जांच से गुजरना होगा; (1) औचित्यता तथा तर्कसंगतता का परीक्षण (2) यह विनियम अल्पसंख्यक समुदाय तथा इसका उपयोग करने वाले अन्य व्यक्तियों के लिए संस्था को शिक्षा का एक प्रभावी साधन बनाने में सहायक होगा (3) संविधान के अनुच्छेद 30(1) के तहत प्रदत्त का मूल चरित्र नष्ट न होता हो।"

(बल दिया गया)

मान्यता/संबद्धता की इच्छुक किसी अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था को शैक्षिक उत्कृष्टता, हैड मास्टर/प्रधानाचार्य/शिक्षकों/व्याख्याताओं के लिए सांविधिक प्राधिकारियों द्वारा निर्धारित पात्रता की न्यूनतम शैक्षिक योग्यताओं और अध्ययन पाठयक्रमों और पाठयचर्या से संबंधित सांविधिक जरूरतों को पूरा करना होगा। संस्था के पास अपनी संवृद्धि के लिए पर्याप्त मूलभूत तथा अनुदेशात्मक ढांचा और साथ ही वित्तीय संसाधन होने ज़रूरी है। मान्यता या संबद्धता प्रदान करने की कोई शर्ते नहीं लगाई जानी चाहिए, जिनसे वस्तुतः और इसके परिणामस्वरूप संविधान के अनुच्छेद 30(1) के अंतर्गत प्रत्याभूत अधिकार के अतिलंघन होता हो अथवा संबंधित संस्था के एक अल्पसंख्यक स्वरूप में कोई कमी आती हों। यदि अनुच्छेद 30(1) के अंतर्गत प्रत्याभूत अधिकार का पूरी तरह से समर्पण को ही

मान्यता या संबद्धता देने की शर्त बना दिया जाता है, तो मान्यता या संबद्धता से इंकार अनुच्छेद 30(1) का उल्लंघन होगा।

केरल शिक्षा विधेयक से प्रारंभ होकर अंततः टी.एम.ए.पाई फाउंडेशन मामले में 11 न्यायाधीशों वाली खण्ड पीठ द्वारा किए जाने वाले सर्वोच्च न्यायालय के अनेक निर्णयों की श्रंखला में वर्तमान विधि स्थापित हुई है। टी.एम.ए.पाई फाउंडेशन में प्रतिष्ठापित विधि प्रस्ताव को पी.ए.ईनादार बनाम महाराष्ट्र राज्य 2005 (6) एससीसी 537) में उच्चतम न्यायालय की एक अन्य खण्ड पीठ द्वारा दिए गए स्पष्टीकरणात्मक निर्णय में दोहराया गया है। इसमें अल्पसंख्यकों द्वारा शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना और उनके संचालन से संबंधित सामान्य सिद्धांतों का सार निम्नलिखित रूप में दिया गया है:

(1) अनुच्छेद 30(1) के तहत प्रत्याभूत अपनी पसंद की शैक्षणिक संस्था स्थापित तथा संचालित करने के अल्पसंख्यकों के अधिकार, उत्कृष्टता शिक्षा का स्तर बनाए रखने और उन्हें सुसाध्य बनाने के लिए राज्य की विनियामक शक्ति के अधीन है। अल्पसंख्यक संस्थाओं को उन उत्कृष्टता के मानकों से नीचे जाने की अनुमति नहीं दी जा सकती जिनकी अपेक्षा शैक्षिक संस्थानों से की जाती है या प्रबंधन के अनन्य अधिकार के बहाने के अधीन, सामान्य मानकों का अनुसरण करने से इंकार करने की अनुमति नहीं दी जा सकती। विद्यार्थियों का प्रवेश, स्टाफ की भर्ती तथा वसूले जाने वाले शुल्क की राशि सहित प्रबंधन के सारभूत घटकों का विनियमन नहीं किया जा सकता।

(2) सांविधिक प्राधिकारियों द्वारा बनाए गए विनियमों को संस्था के अल्पसंख्यक स्वरूप का अतिक्रमण नहीं करना चाहिए। इन विनियमों को दोहरे मापदण्ड को अवश्य पूरा करना चाहिए कि यह संस्था के शैक्षणिक स्वरूप का

विनियंत्रक है तथा अल्पसंख्यक समुदाया या अन्य व्यक्तियों, जो इसका उपयोग करते हैं, के लिए संस्था को शिक्षा का एक प्रभावी माध्यम बनाने में सहायक है। ऐसे विनियम जो कि इन उद्देश्यों को समाविष्ट करते हैं तथा उनके साथ सामंजस्य स्थापित करते हैं, उन्हें तर्कसंगत माना जा सकता है।

(3) शैक्षणिक संस्थाओं के संचालन तथा सहायतानुदान को नियंत्रित करने के लिए राज्य द्वारा बनाए गए कानून अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थाओं पर भी लागू होंगे। लेकिन यह ऐसा कोई कानून या विनियम स्टाफ पर प्रबंधन के समग्र प्रशासनिक नियंत्रण और शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना और उनके संचालन के अधिकार में किसी अन्य तरीके से बाधा डालते हैं या उन्हें संक्षिप्त/कम करते हैं तो ऐसे कानून या विनियम, उस सीमा तक अल्पसंख्यक संस्थाओं के लिए अप्रयोज्य होंगे।

(4) राष्ट्रीय हित, राष्ट्रीय सुरक्षा, समाज कल्याण, लोक व्यवस्था, सदाचार स्वास्थ्य, स्वच्छता, कराधान इत्यादि से संबंधित सभी पर लागू होने वाले देश के सामान्य कानून, अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थाओं पर भी समान रूप से लागू होंगे।

(5) अनुच्छेद 30(1) के अधीन प्रत्याभूत मौलिक अधिकार प्रभावी होने के लिए आशयित है तथा इस किसी प्रशासनिक अत्यावश्यकता द्वारा कम नहीं करना चाहिए। कोई प्रशासनिक या वित्तीय असुविधा या कठिनाइयां, मौलिक अधिकार के अतिलंघन को न्यायोचित नहीं ठहरा सकती।

(6) सहायता की प्राप्ति, सहायता प्राप्त करने वाली अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था की प्रकृति या स्वरूप में परिवर्तन नहीं करती है। अनुच्छेद 30(1) में स्पष्ट रूप से अन्तर्निहित है कि राज्य द्वारा अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था को दिए गए किसी अनुदान के साथ ऐसी शर्तों को नहीं जोड़ा जा सकता जो कि शैक्षणिक संस्थाओं

की स्थापना और उनका संचालन करने के लिए अल्पसंख्यकों के अधिकारों को किसी तरह से कम या संक्षिप्त करती हो। लेकिन राज्य सहायता अनुदान को प्राप्त करने तथा इसके यथोचित उपयोग के लिए उचित शर्ते निर्धारित कर सकता है।

(7) राज्य शिक्षा की गुणवत्ता को सुनिश्चित करने के लिए अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थाओं के कर्मचारियों की सेवा शर्तों को विनियमित कर सकता है। शैक्षणिक संस्थाओं के कर्मचारियों की सेवा शर्तों को विनियमित करने के लिए आशयित कोई भी कानून, अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थाओं पर भी लागू होगा, बशर्ते कि ऐसा कानून स्टाफ पर प्रबंधन के समग्र प्रशासनिक नियंत्रण में कोई बाधा नहीं डालता हो। कर्मचारियों की शिकायतों के निवारण के लिए राज्य एक कार्यविधि बना सकता है।

(8) अपनी पसंद की शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना तथा उनका संचालन करने के अल्पसंख्यकों के अधिकार में निम्नलिखित अधिकार शामिल हैं:

(क) अपनी शासी निकाय को चुनने का अधिकार जिसमें संस्था के संस्थापकों को विश्वास तथा भरोसा है कि वे संस्था के कामकाज का प्रबंधन तथा उनका संचालन कर सकते हैं।

शासी निकाय के सदस्यों के रूप में नामित करने के लिए व्यक्तियों को चुनने की स्वतंत्रता को शैक्षणिक संस्था के संचालन के अधिकार के एक अत्यावश्यक पहलू के रूप में हमेशा स्वीकार किया गया है। कोई नियम, जो कि प्रबंधन के इस अधिकार को छीनता है, को संविधान के अनुच्छेद 30(1) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार में बाधा डालने के रूप में माना गया है। प्रबंधन, प्रबंध समितियों/शासी निकायों में अन्य समुदायों के अग्रगण्य या समक्ष व्यक्तियों का प्रवेश दे सकता है। प्रबंधन,

कुछ गैर-अल्पसंख्यक शासी निकाय में एक गैर-अल्पसंख्यक सदस्य को शामिल करने से अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था का एक स्वरूप समाप्त नहीं होता तथा उसका अल्पसंख्यक संस्था का दर्जा खत्म नहीं होता। तब तक उसकी प्रबंध समिति/शासी निकाय के संविधान में अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्यों के लिए एक प्रभावी बहुमत का प्रावधान बना रहता है।

राज्य सरकार/सांविधिक प्राधिकरण, एक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था की प्रबंध समिति/शासी निकाय में अपने नामित व्यक्तियों को प्रवेश नहीं दिला सकती। संस्था के कार्यों को संचालित करने के लिए अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था ही प्रबंध समिति/शासी निकाय में एक बाहय प्राधिकारी, चाहे वह कितना भी उच्च हो, का प्रवेश जो कि या तो सीधे या उसके नामित व्यक्तियों के माध्यम से किया जाए, संविधान के अनुच्छेद 30(1) द्वारा प्रत्याभूत मौलिक अधिकार का पूर्णतः विनाशक होगा तथा प्रबंधन को एक असहाय ईकाई के रूप में ला खड़ा करेगा जिसका कामकाज में कोई वास्तविक अधिकार नहीं रहेगा तथा इस प्रकार संस्था का पूर्ण व्यक्तित्व तथा विशिष्टता नष्ट हो जाएगी जो संविधान के अनुच्छेद 30 द्वारा पूर्णतः संरक्षित है।

(ख) शिक्षण स्टाफ (शिक्षकों/व्याख्याताओं तथा प्रधान शिक्षकों प्रधानाचार्यों) तथा गैर-शिक्षण स्टाफ की भी नियुक्ति करना तथा यदि इसके कर्मचारियों में से किसी की ओर से कर्तव्य की अवहेलना की गई तो कार्रवाई करना।

प्रशासन में स्वयायत्ता का तात्पर्य है संस्था के कामकाज का कारगर तरीके से संचालन करना तथा उसका प्रबंधन करने का अधिकार। राज्य या कोई विश्वविद्यालय/सांविधिक प्राधिकरण, विनियामक उपायों को लागू करने के आवरण या उसकी आड़ में एक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था की प्रशासनिक स्वायत्तता को

नष्ट नहीं कर सकता या संस्था के प्रबंधन द्वारा किए जाने संचालन के साथ हस्तक्षेप करना आरंभ नहीं कर सकता जिससे कि संबधित संस्था के संचालन का अधिकार निरर्थक या भ्रामक बन जाता हो। राज्य सरकार या एक विश्वविद्यालय अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था के शिक्षक/व्याख्याताओं/प्रधान शिक्षकों/प्रधानाचार्यों की नियुक्ति के लिए पद्धति या प्रक्रिया विनियमित नहीं कर सकती। एक बार, अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था के प्रबंधन द्वारा चयन की किसी विवेकपूर्ण प्रक्रिया को अपनाते हुए, राज्य या विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित अपेक्षित अर्हताओं से सम्पन्न शिक्षक/व्याख्याता/प्रधान शिक्षक/प्रधानाचार्य का चयन कर लिया जाता है, तो राज्य सरकार या विश्वविद्यालय को उन अध्यापकों इत्यादि के चयन को वीटो करने का अधिकार नहीं होगा।

राज्य सरकार या विश्वविद्यालय, एक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था पर ऐसे नियम/विनियम/अध्यादेश लागू नहीं कर सकती जिससे स्टाफ के चयन का नियंत्रण संबंधित संस्था से राज्य सरकार या विश्वविद्यालय को हस्तांतरित हो जाता हो और इस प्रकार वस्तुतः यह अनुच्छेद 30(1) के अधीन प्रत्याभूत अल्पसंख्यकों के अधिकार में प्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप करते हुए, संस्था के लिए स्टाफ के चयन हेतु राज्य सरकार या विश्वविद्यालय को अनुमति प्रदान करने के समान है। एक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था के शिक्षण स्टाफ की नियुक्ति के लिए चयन समिति की संरचना ऐसी नहीं होनी चाहिए जो प्रबंधन को एक असहाय ईकाई के रूप में बदल देती हो, जिसका स्टाफ के चयन/नियुक्ति के मामलों में कोई वास्तविक अधिकार न रहता हो और इस प्रकार इससे संस्था का पूर्ण व्यक्तित्व और विशिष्टता नष्ट हो जाएगी, जो संविधान के अनुच्छेद 30(1) द्वारा पूर्णतः संरक्षित है।

राज्य सरकार या विश्वविद्यालय को यह अधिकार प्राप्त नहीं है कि वह अल्पसंख्यक शैक्षिक संस्थाओं से यह अपेक्षा करें कि वह अपने शिक्षण तथा गैर-शिक्षण स्टाफ के चयन/नियुक्ति या स्टाफ के किसी सदस्य के विरुद्ध अनुशासनिक कार्रवाई प्रारम्भ करने के मामले में उसका अनुमोदन प्राप्त करे। राज्य सरकार या विश्वविद्यालय की भूमिका, यह सुनिश्चित करने की सीमा तक सीमित है कि एक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था के प्रबंधन द्वारा चयनित किए गए शिक्षक/व्याख्याता/प्रधान शिक्षण/प्रधानाचार्य तत्संबंधी निर्धारित पात्रता की अपेक्षित अर्हताओं को पूरा करते हैं।

लिली कुरियन बनाम सीनियर लेविना (1979) 2 एस सी 124 मामले में उस प्रावधान को अनुच्छेद 30(1) का अतिक्रमण कारी माना गया जिसके तहत निलंबन तथा अन्य शास्तियों के एक आदेश के विरुद्ध एक महाविद्यालय के स्टाफ के एक व्यक्ति सदस्य द्वारा कुलपति को अपील करने का अधिकार मिल रहा था। पुनः आल सेंट्स हाई स्कूल हैदराबाद बनाम आंध्र प्रदेश राज्य 1980(2) एससीसी 478 मामले में महाविद्यालय के प्रबंधन द्वारा एक शिक्षक के विरुद्ध पारित किए गए बरखास्तगी, निष्कासन या रैंक में कमी के सभी आदेशों के लिए सक्षम प्राधिकारी का पूर्व-अनुमोदन प्राप्त करने को आदेश दे रहे, आंध्र प्रदेश निजी-शैक्षणिक संस्था नियंत्रण अधिनियम 1995 में अंतर्विष्ट एक प्रावधान को अल्पसंख्यक संस्था के लिए अप्रयोज्य माना गया।

यह आयोग के ध्यान में लाया गया है कि दिनांक 12.10.1981 के ज्ञापन संख्या 3-1/78/सीपी के तहत विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सभी विश्वविद्यालयों को निदेश दिया गया है कि अपनी संविधि/अध्यादेश/विनियम बनाते समय, उन्हें सुनिश्चित करना चाहिए कि वे अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थाओं के संचालन से संबंधित संविधान के अनुच्छेद 30(1) का अतिलंघन न करें।

हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम परसराम, एआईआर 2008 एससीडब्ल्यू 373 मामले मंे उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया है कि उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई विधि की घोषणा का किसी प्राधिकारी द्वारा किसी बहाने से त्याग नहीं किया जा सकता। ब्रह्म समाज शिक्षा सोसायटी बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (2004) 6 एससीसी 224 मामले में, उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि 'राज्य सरकार इस संबंध में, इस न्यायालय द्वारा की गई विधिक घोषणा का ध्यान रखेगी तथा अपने कानूनों, नियमों और विनियमों का संशोधित करेगी ताकि उन्हें उसमें उपवर्णित सिद्धांतों के अनुरुप लाया जा सके।'

अल्पसंख्यकों द्वारा उनकी पसंद के शिक्षकों/व्याख्याताओं/प्रधान शिक्षकों/प्रधानाचार्यों को नियुक्त करने के अधिकार के महत्त्व का उल्लेख विशेष रूप से सेंट जेवियर मामले में अनुच्छेद 30 के अधीन उनके मौलिक अधिकार के एक महत्वपूर्ण भाग के रूप में निम्नलिखित रूप में किया गया थाः

'एक शैक्षणिक संस्था का स्तर और स्वरूप कैसा होगा, यह उस महाविद्यालय के प्रधानाचार्य तथा शिक्षकों पर निर्भर करता है। इसका ख्याति, अनुशासन को बनाए रखना तथा शिक्षण में इसकी दक्षता उन्हीं पर निर्भर करती है। प्रधानाचार्य को चुनने का अधिकार, तथा प्रबंधन द्वारा शिक्षकों के दृष्टिकोण तथा उनकी सोच का समग्र मूल्यांकन करने के पश्चात् उनकी नियुक्ति पर उनसे अध्यापन करवाना, संभवतः एक शैक्षणिक संस्था के संचालन के अधिकार का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पहलू है। ..... जब तक कि चुने गए व्यक्तियों की अर्हताएं विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित अर्हताओं के अनुरुप हैं, इस यह चुनाव को प्रबंधन पर ही छोड़ देना चाहिए। वह अल्पसंख्यकों द्वारा स्थापित शैक्षणिक संस्था का संचालन करने के उनके मौलिक अधिकार का भाग है।'

(बल दिया गया)

सेंट जेवियर (ऊपर) मामले में निरुपित पूर्वोक्त विधिकी प्रतिपादता का टी.एम.ए.पाई फाउंडेशन (ऊपर) मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुमोदन किया गया है। अनुशासन तथा शैक्षिक उत्कृष्टता के हित में भी, राज्य को अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था के काम-काज को विनियंत्रित करने का अधिकार है। लेकिन उस प्रक्रिया में भी प्रबंधन के पूर्वोक्त अधिकार को छीना नहीं जा सकता, चाहे सरकार द्वारा सौ प्रतिशत अनुदान ही क्यों न दिया जा रहा हो। यह तथ्य से कोई अन्तर नहीं पड़ेगा कि शिक्षक/प्रधान शिक्षक/कैथोलिक कॉलेज बनाम टी जोस 2007 एआईआर एससी डब्ल्यू 132 मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया है कि हालांकि संस्था सहायता प्राप्त भी करती हो, तो भी उक्त अधिकार के साथ कोई हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता। बशर्ते कि राज्य या विनियामक प्राधिकारी द्वारा निर्धारित पात्रता शर्तों/अर्हताओं को पूरा किया जा रहा है, तो अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था को चयन की किसी युक्तिसंगत प्रक्रिया को अपनाते हुए शिक्षकों/व्याख्याताओं/प्रधान शिक्षकों/प्रधानाचार्यों को नियुक्त करने की स्वतंत्रता होगी। अपेक्षित अर्हताएं और अनुभव को निर्धारित करने की सीमा तक या अन्यथा स्वयं संस्था के हितों में संवर्धन करने की सीमा तक को छोड़कर, उस पर किसी प्रकार की रोक लगाना संविधान के अनुच्छेद 30(1) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार के उल्लंघन के रूप में ही माना जाएगा।

(ग) अपनी पसंद के पात्र विद्यार्थियों को प्रवेश देना तथा एक तर्कसंगत शुल्क ढांचें की स्थापना करना।

पी ए ईनामदार (ऊपर) के मामले में, यह निर्णय दिया गया कि एक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था को अपनी पसंद के विद्यार्थियों को प्रवेश देने का अधिकार है, यह

अपनी स्वेच्छा से गैर-अल्पसंख्यक समुदाय के विद्यार्थियों को प्रवेश दे सकती है। तथापि इसे गैर-अल्पसंख्यक समुदाय के विद्यार्थियों को प्रवेश देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। गैर-अल्पसंख्यक समुदाय के विद्यार्थियों को प्रवेश देने की गैर-अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था की स्वेच्छा पर एक मात्र प्रतिबंध, जैसा कि अनुच्छेद 30 में आपने आप वर्णित किया गया है, यह है कि इस प्रवेश का ढंग तथा संख्या ऐसी न हो कि इससे संस्था के अल्पसंख्यक स्वरूप का अतिक्रमण होता हो।' इस संबंध में पी ए ईनामदार (ऊपर) के मामले में की गई निम्नलिखित टिप्पणियों का संदर्भ लिया जाए:

'131. यहां हम अनिवासी भारतीयों (संक्षेप में 'एन आर आई) के लिए आबंटित सीटों या एन आर आई सीटों के बारे में मामले पर विचार करने के लिए प्रवृत्त हैं। यह सामान्य जानकारी है कि कुछ संस्थाएं ऐसे कोटे के अधीन, विद्यार्थियों की एक कतिपय संख्या को शुल्क की उच्चतर राशि वसूल करके प्रवेश देते हैं। वास्तव में, प्रवेशों के संबंध में 'एन आर आई' एक मिथ्या नाम है। कुल मिलाकर इस न्यायालय में आ रहे एक के बाद एक मामलों में हमने देखा है कि न तो वह विद्यार्थी, जो इस श्रेणी के अधीन प्रवेश प्राप्त करते हैं और न ही कम मेधावी छात्र, जो अधिक धन का भुगतान करने में समर्थ होते हैं, प्रवेश प्राप्त कर लेते हैं सुनवाई के दौरान, यह उल्लेख किया गया था कि एक ऐसी सीटों की एक सीमित संख्या उपलब्ध का जानी चाहिए क्योंकि अनिवासी भारतीय कोटा में प्रवेश प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों द्वारा लाया गया धन, शैक्षणिक संस्थाओं को उनके शिक्षा के स्तर को मजबूत करने तथा उनकी शैक्षणिक गतिविधियों को परिवर्द्धित करने में भी असमर्थता प्रदान करता है। यह भी उल्लेख किया गया था जो कि भारतीय मूल के लोग अन्य देशों में जाकर बस गए हैं, उनकी अपने बच्चों को वापस अपने देश में लाने का अभिलाषा होती है, क्योंकि वे यहां न केवल शिक्षा प्राप्त करते हैं

बल्कि यहां रहने के कारण वे भारतीय सांस्कृतिक लोकाचारों के साथ भी दोबारा जुड़ जाते हैं। वे यह भी चाहते हैं कि वह धन, जिसे वे अपने बच्चों की शिक्षा पर और कहीं खर्च करेंगे, अच्छा है कि उनकी अपना मातृभूमि में पहुँचे। हमारी राय में, ऐसी सीटों का एक सीमित आरक्षण, जो 15 प्रतिशत से अधिक न हो, दो शर्तों के अध्यधीन, प्रबंधन के विवेक पर निर्भर रहते हुए, अनिवासी भारतीयों को उपलब्ध किया जाए। प्रथम, ऐसा सीटों का लाभ केवल वास्तविक अनिवासी भारतीयों द्वारा और उनके बच्चों या आश्रितों के लिए उठाया जाना चाहिए। द्वितीय, इस कोटे के अधीन मेधाविता की पूरी तरह से उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। ऐसे अनिवासी भारतीयों से चाहे किसी रूप में एकत्र की गई धनराशि का प्रयोग समाज के आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्गों जैसे विद्यार्थियों के लाभ के लिए करना चाहिए, जिन्हें शैक्षणिक संस्था द्वारा सुनिर्धारित मानदण्डों के आधार पर उनके शुल्क के इमदादी भुगतान के आधार पर प्रवेश दिया जा सकता है। ऐसे कोटे के दुरुपयोग तथा अनिवासी भारतीय कोटा सीटों से संबंधित किसी कदाचार को रोकने के लिए उपयुक्त विधेयक या विनियम बनाने का आवश्यकता है। जब तक कि राज्य द्वारा ऐसा नहीं किया जाता, इस्लामिक एकेडमी मामले में दिए गए निर्देशों के अनुसार गठित समितियों को इसका नियमन करना होगा।

132. प्रथम प्रश्न का हमारा उत्तर यह है कि राज्य द्वारा किसी अल्पसंख्यक अथवा गैर-अल्पसंख्यक गैर-सहायता शैक्षिक संस्था में न तो आरक्षण नीति ही लागू की जा सकती है और न ही अपनाए जाने के लिए कोई भी कोटा अथवा प्रवेश का प्रतिशत निर्धारित किया जा सकता है। अल्पसंख्यक संस्थाएं गैर-अल्पसंख्यक समुदाय से विद्यार्थियों तथा अन्य राज्यों से भी अपने समुदाय के सदस्यों सहित अपनी पसंद के विद्यार्थियों को, दोनों केवल सीमित तक ही प्रवेश देने के लिए स्वतंत्र है और उस रूप में तथा उस हद तक नहीं कि उनका

अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था वाला दर्जा ही समाप्त हो जाए। यदि वे ऐसा करते हैं वे अनुच्छेद 30(1) का संरक्षण खो देते हैं।

(बल दिया गया)

पी ए ईनामदार (ऊपर) मामले में उत्तर देने के लिए तैयार किए गए प्रश्नों में से यह था कि क्या निजी गैर-सहायता प्राप्त व्यावसायिक महाविद्यालय प्रवेश प्रक्रिया की अपनी खुद की विषय वस्तु तैयार करके छात्रों को प्रवेश देने के हकदार हैं। प्रश्न का उत्तर देते हुए माननीय न्यायधीशों द्वारा निम्नानुसार टिप्पणी की गई है:-

'133. जहां तक अल्पसंख्यक गैर सहायता प्राप्त संस्थाओं का संबंध है, विद्यार्थियों को प्रवेश देना 'एक संस्था की स्थापना तथा उसका संचालन करने के अधिकार' का एक घटक होने के कारण, राज्य उसके साथ हस्तक्षेप नहीं कर सकता। स्नातकपूर्व शिक्षा के स्तर तक, अल्पसंख्यक गैर-सहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थाएं पूरी स्वतंत्रता का उपयोग करती हैं।

134. तथापि, स्नातक तथा स्नातकोत्तर की शिक्षा के अलावा तकनीक तथा व्यावसायिक शैक्षणिक संस्थाओं के लिए भी विभिन्न मानदण्ड लागू होंगे। ऐसी शिक्षा किसी संस्था द्वारा प्रदान नहीं की जा सकती, जब तक कि वह विधि द्वारा सृजित, किसी सक्षम प्राधिकरण जैसे विश्वविद्यालय, बोर्ड, केन्द्रीय या राज्य सरकार या उसके सदृश द्वारा मान्यता प्राप्त या उसके साथ संबद्ध न हो। इस स्तर पर शिक्षा में उत्कृष्टता तथा उच्च मानकों को बनाए रखना अनिवार्य है। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए, राज्य राष्ट्रीय हित में हस्तक्षेप कर सकता है बल्कि उसे अनिवार्य रूप से हस्तक्षेप करना चाहिए। व्यक्ति-विशेष द्वारा इस स्तर पर प्राप्त

की गई शिक्षा, जानकारी तथा अधिगम सामूहिक रूप से राष्ट्रीय धन का निर्माण करता है।

135. पाई फाउंडेशन मामले में पहले ही निर्णय दिया गया है कि शैक्षणिक संस्थाओं के अल्पसंख्यक दर्जे का निर्धारण, राज्य को एकक के रूप में मानते हुए किया जाए। अन्य राज्यों में रह रहे उस समुदाय विशेष के विद्यार्थियों को जहां कि वे अल्पसंख्यक नहीं है उस विशेष राज्य में अल्पसंख्यक नहीं माना जाएगा, और इस प्रकार उनका प्रवेश उस राज्य के अन्य गैर-अल्पसंख्यक विद्यार्थियों के समकक्ष होगा। ऐसे प्रवेश केवल सीमित मात्रा में होंगे, जो जिसे 'छिडकाव' के रूप में किया गया प्रवेश माना जा सकता है, इस शब्द को हमने केरल शिक्षा विधेयक 1957 से लेते हुए पहले भी प्रयोग किया है। सहायता प्राप्त या गैर-सहायता प्राप्त दोनों तरह के अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश, राज्य स्तर पर किए जाएंगे। पारदर्शिता तथा योग्यता को सुनिश्चित करना होगा।

136. चाहे अल्पसंख्यक हों अथवा गैर-अल्पसंख्यक संस्थाएं, किसी राज्य में किसी भी एक शाखा में शिक्षा प्रदान करने वाली एक प्रकार जैसी एक से अधिक संस्थाएं हो सकती हैं। शिक्षा के किसी एक शाखा में शिक्षा लेने के लिए प्रवेश चाहने वाले उसी इच्छुक छात्र को बहुत से संस्थानों से प्रवेश फार्म लेने होते हैं तथा एक ही अथवा विभिन्न तिथियों पर अलग-अलग स्थानों पर आयोजित अनेक प्रवेश परीक्षणों में उपस्थित होना होता है और इन तिथियों में टकराव भी हो सकता है। यदि उसी अभ्यर्थी को अनेक परीक्षाओं में उपस्थित होना होता है, तो उसे अनावश्यक और अपरिहार्य व्यय तथा असुविधा होगी। समान अथवा मिलती-जुलती शिक्षा प्रदान करने वाली एक समूह की संस्थाओं के लिए आयोजित की जाने वाली प्रवेश परीक्षा में कुछ भी गलत नहीं है। एक राज्य में अथवा एक से अधिक राज्य में स्थित ऐसी संस्थाएं मिलकर समान प्रवेश परीक्षा आयोजित कर सकती हैं

अथवा राज्य स्वयं अथवा किसी के माध्यम से ऐसी परीक्षा आयोजित कराने के लिए एजेंसी का प्रबंध कर सकता है। इस समान योग्यता सूची में से सफल अभ्यर्थियों की पहचान की जा सकती है और प्रस्तावित पाठयक्रमों के अनुसार सीटों की संख्या, अल्पसंख्यक के प्रकार जिससे संस्था संबंधित है तथा अन्य संगत तथ्यों की निर्भरता पर, विभिन्न संस्थाओं को आबंटित किए जाने के लिए अभ्यर्थियों को चुना जा सकता है। समान प्रवेश परीक्षा (संक्षेप में "साप्रप") आयोजित कराने वाली एजेंसी एक ऐसी होनी चाहिा जो परम विश्वसनीय हो और इस मामले में विशेषज्ञता प्राप्त हो। इससे पारदर्शिता और योग्यता के दोनों उद्देश्यों की पूर्ति सुनिश्चित होगी। उक्त उद्देश्यों को प्राप्त करे के उद्देश्य से साप्रप (सीईटी) आवश्यक है और यह छात्र समुदाय को परेशानी और शोषण से बचाने के लिए भी आवश्यक है। ऐसी सामान्य प्रवेश परीक्षा आयोजित कराना जिसके पश्चात् केन्द्रीयकृत काउंसलिंग कराना, अथवा दूसरे शब्दों में प्रवेशों की विनियमित करने वाली एकल खिड़की प्रणाली अपनी पसन्द के छात्रों को प्रवेश देने के लिए अल्पसंख्यक गैर-सहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थाओं के परस्पर योग्यता के क्रम को बदले बिना साप्रप (सीईटी) में तैयार सफल अभ्यर्थियों की सूची में से किया जा सकता है।

137. पाई फाउंडेशन ने निर्णय दिया है कि अल्पसंख्यक गैर सहायता प्राप्त संस्थाएं, उन विद्यार्थियों को चुनने जिन्हें प्रवेश की अनुमति दी जानी है तथा उसकी प्रक्रिया में, मौलिक अधिकार के बेरोक प्रयोग का न्यायसंगत रूप से दावा कर सकती है बशर्ते कि यह निष्पक्ष, पारदर्शी तथा शोषण रहित है। यही सिद्धांत गैर-अल्पसंख्यक गैर-सहायता प्राप्त संस्थाओं के लिए लागू होता है। कोई एक अकेली ऐसी संस्था भी हो सकती है, जो कि एक विशेष प्रकार की शिक्षा प्रदान कर रही है, जिसे किसी अन्य संस्था द्वारा प्रदान नहीं किया जा रहा है तथा निष्पक्ष,

पारदर्शी और शोषण रहित होने के मापदण्ड को पूरा करते हुए अपनी प्रवेश प्रक्रिया है। एक समान या मिलती-जुलती व्यावसायिक शिक्षा प्रदान कर रही सभी संस्थाएं, उपरोक्त तीनों मापदण्डों को पूरा करते हुए, एक सम्मिलित प्रवेश परीक्षा आयोजित करने के एिल एक साथ मिल सकती है। राज्य, निष्पक्ष तथा योग्यता आधारित प्रवेशों को निश्चित करने तथा अव्यवस्था को रोकने के लिए एक सम्मिलित प्रवेश परीक्षा आयोजित करने के लिए एक साथ मिल सकती है। राज्य, निष्पक्ष तथ्या योग्यता आधारित प्रवेशों को निश्चित करने तथा अव्यवस्था को रोकने के लिए, एक सम्मिलित प्रवेश परीक्षा आयोजित करने की क्रियाविधि भी मुहैया कर सकता है। एक निजी संस्था या संस्थाओं के समूह द्वारा इस प्रकार अपनाई गई प्रवेश प्रक्रिया, यदि इसमें ऊपर उल्लिखत सभी तीनों मापदण्डों या तीनों में से किसी मापदण्ड को पूरा करने में असफल रहती है तो राज्य द्वारा उस के स्थान पर अपनी प्रक्रिया का प्रयोग किया सकता। तदनुसार यह दूसरे प्रश्न का उत्तर है।

138. यह विशेष रूप से उल्लेख करने की आवश्यकता है कि योग्यता को बढ़ावा देने, उत्कृष्टता प्राप्त करने और कदाचार को समाप्त करने के लिए छात्र समुदाय के समग्र हित और कल्याण को ध्यान में रखते हुए, एक केन्द्रीकृत तथा एकल खिड़की पद्धति का प्रावधान करते हुए, प्रवेशों को नियंत्रित करना अनुज्ञेय होगा। ऐसी प्रक्रिया द्वारा व्यापक स्तर पर पारदर्शी आधार पर योग्यता आधारित प्रवेशों को प्रदान करना सुनिश्चित किया जा सकता है। इस संबंध में विनियम बनने तक, प्रवेश समितियां प्रवेश प्रक्रिया की निगरानी कर सकती है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि योग्यता को कोई आघात पहुंचे।

(बल दिया गया)

(घ) संस्था के लाभ के लिए इसकी संपत्तियों और परिसंपत्तियों का प्रयोग करनाः एक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था का प्रबंधन इसके भावी विकास के अलावा इसके विस्तार के लिए भी, एक शैक्षणिक संस्था की संपत्तियों तथा परिसंपत्तियों का प्रयोग कर सकता है।

शिक्षण का माध्यम

कोई विशेष राज्य, अपनी क्षेत्रीय भाषा की अनिवार्य रूप से शिक्षा देने का विधिमान्यतः नीतिगत निर्णय ले सकता है। (देखें अंग्रेजी माध्यम विद्यार्थी अभिभावक संघ बनाम कर्नाटक राज्य (1994)। एससीसी 550)। राज्य सरकार राज्य के बृहत्तर हित को ध्यान में रखते हुए नीतिगत निर्णय लेती है, क्योंकि उस राज्य का सरकारी तथा सामान्य कामकाज क्षेत्रीय भाषा में किया जाता है। उस विशेष राज्य में रह रहे लोगों के प्रतिदिन के कार्यों को आसानी से करने के लिए तथा दैनिक प्रशासन को यथोचित रूप से चलाने के लिए भी क्षेत्रीय भाशा का समुचित ज्ञान आवश्यक है। राज्य की क्षेत्रीय भाषा का ज्ञान सांस्कृतिक बाधाओं को दूर करने में सेतु का काम करेगा तथा राष्ट्रीय अखंडता के लिए सकारात्मक रूप से योगदान देगा। अतः राज्य द्वारा उसकी क्षेत्रीय भाषा में शिक्षा देने के लिए धार्मिक/भाषाई अल्पसंख्यकों पर लागू किया गया विनियम औचित्यपूर्ण है, जो कि राज्य की आवश्यकताओं और बृहत्तर हित के लिए सहायक है और यह संविधान के अनुच्छेद 30(1) के तहत प्रदान किए गए अधिकार के साथ किसी तरह से हस्तक्षेप नहीं करता है।

किसी राज्य की राजभाषा को शिक्षण के एक मात्र माध्यम के रूप में लागू करना आम जनता के हित में नहीं कहा जा सकता तथा इसका लोक हित के साथ कोई संबंध नहीं है। शिक्षण का माध्यम, संविधान के अनुच्छेद 19 के अधीन प्रत्याभूत

वाक तथा अभिव्यक्ति स्वातंत्रय का एक पहलू है तथा राज्य कोई ऐसी विधि का अधिनियमन या नियम का निर्माण नहीं कर सकता जिसमें यह समादेश हो, कि एक विद्यार्थी को एक विशेष क्षेत्रीय भाषा में ही स्वयं को अभिव्यक्त करना चाहिए। संविधान के अनुच्छेद 13 के स्पष्ट आदेश को ध्यान में रखते हुए, राज्य ऐसे किसी विधि का अधिनियमन या विनियम का निर्माण नहीं कर सकता जिससे पूर्वोक्त मौलिक अधिकार के बारे में मात्र भ्रम पैदा होता हो। इसके अलावा, संविधान का अनुच्छेद 30(1), अल्पसंख्यकों को, संस्था, जिसकी वे स्थापना करना चाहते हैं, के स्वरूप का चयन करने में व्यापक विवेकाधिकार तथा विकल्प देता है। संस्था के उक्त स्वरूप में, शिक्षण के माध्यम का प्रकार भी शामिल है जिसमें वे शिक्षा प्रदान करना चाहते हैं। इस प्रश्न, कि क्या शिक्षण का माध्यम चुनने का अधिकार एक मौलिक अधिकार है तथा धार्मिक या भाषाई अल्पसंख्यक को अपनी पसंद के शिक्षण के माध्यम को चुनने का अधिकार है, को टी एम ए पाई के मामले (ऊपर) में उच्चतम न्यायालय द्वारा निश्चित किया गया है। उच्चतम न्यायालय ने घोषित किया है कि अनुच्छेद 30(1) के अधीन अपनी पसंद की शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना करने तथा उनका संचालन करने के अधिकार में, शिक्षा प्रदान करने में शिक्षण के माध्यम को चुनने का अधिकार भी शामिल होगा। शिक्षण के माध्यम का चुनाव पूर्ण रूप से अल्पसंख्यक संस्था के प्रबंधन की पसंद पर है।

कर्नाटक में प्राथमिक तथा माध्यमिक विद्यालयों के सहयुक्त प्रबंधन (ऊपर) मामले में कर्नाटक उच्च न्यायालय की एक पूर्ण न्यायपीठ ने घोषित किया है कि अपनी पसंद के शिक्षण के माध्यम को चुनने का अधिकार, संविधान के अनुच्छेदों 19(1) (ए) (जी), 21, 26, 29(1) और 30 (1) के अधीन प्रत्याभूत एक मौलिक अधिकार है। पूर्ण न्यायपीठ ने यह निर्णय भी दिया है कि '(1) प्राथमिक विद्यालय

तक में भी शिक्षण के माध्यम को चुनने का अधिकार, अभिभावक तथा बच्चे का एक मौलिक अधिकार है। शिक्षण के माध्यम का निर्धारण करने के लिए राज्य की नीतिगत शक्ति को, अभिभावक तथा बच्चे के इस मौलिक अधिकार को स्वीकार करना होगा और यह कि (2) सरकारी मान्यता प्राप्त विद्यालयों में अध्ययन कर रहे बच्चों को मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए बाध्य करने वाली सरकार की नीति संविधान के अनुच्छेदों 19(1) (जी), 26 तथा 30(1) का उल्लंघन है।

शुल्क विनियम

टी.एम.ए. पाई फाउंडेशन (ऊपर) मामले में घोषित विधि के अनुसार प्रत्येक संस्था, इस सीमा के अध्यधीन अपना खुद का शुल्क ढांचा निर्धारित करने के लिए स्वतंत्र है कि इसमें कोई मुनाफाखोरी नहीं की जा सकती तथा न ही प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कैपिटेशन शुल्क वसूला जा सकता है। इस संबंध में, पी ए ईनामदार (ऊपर) मामले में माननीय न्यायधीशों की निम्नलिखित टिप्पणियों का संदर्भ भी लिया जा सकता है:-

”144. हमारे विचार में, इस्लामिक एकेडमी के निर्णय में प्रवेश प्रक्रिया को मा ॅनीटर करने तथा शुल्क ढांचे का निर्धारण करने के लिए दो समितियां, विनियामक उपायों के रूप में अनुज्ञेय है, जिनका उद्देश्य अपनी संस्थाओं में शोषण रहित स्थितियों में व्यावसायिक शिक्षा के अपेक्षित मानकों को बनाए रखने में, समग्र रूप में विद्यार्थी समुदाय के अलावा स्वयं अल्पसंख्यकों के भी हितों को संरक्षित करना है। प्रवेश प्रक्रिया और शुल्क निर्धारण को मॉनिटर करने के लिए राज्य विधानमंडल द्वारा बनाए गए विधिक उपबंध या न्यायालय द्वारा बनाई योजना, अनुच्छेद 30(1) के अधीन प्रदान किए गए अल्पसंख्यकों के अधिकार या अनुच्छेद 19(1) (छ) के

अधीन प्रदान किए गए अल्पसंख्यकों तथा गैर अल्पसंख्यकों के अधिकार का अतिक्रमण नहीं करती है। वे अल्पसंख्यक संस्थाओं के हित में संविधान के अनुच्छेद 30(1) तथा जन साधारण के हित में अनुच्छेद 19(6) के औचित्यपूर्ण प्रतिबंध है।"

(बल दिया गया)

प्रवेश में आरक्षण की नीति

भारत के संविधान का अनुच्छेद 15(5), अनुच्छेद 30(1) के अधीन स्थापित एक शैक्षणिक संस्था को प्रवेश में आरक्षण की नीति से छूट प्रदान करता है। ऐसी स्थिति में, केन्द्रीय शैक्षणिक संस्थाएं (प्रवेश में आरक्षण) अधिनियम, 2006 के उपबंधों को अनुच्छेद 30(1) के अधीन स्थापित एक शैक्षणिक संस्था पर लागू नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त, विधि की प्रतिपादना पर पी ए ईनामदार (ऊपर) एक प्राधिकार है कि एक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था में राज्य द्वारा न तो आरक्षण की नीति को लागू किया जा सकता है और न ही राज्य द्वारा विनियोजन करने के लिए प्रवेश का कोई कोटा या प्रतिशत निर्धारित किया जा सकता है। राज्य, किन्हीं अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेशों को विनियमित या नियंत्रित नहीं कर सकता ताकि उन्हें राज्य द्वारा चुने गए उम्मीदवारों को उपलब्ध सीटों का एक हिस्सा देने के लिए बाध्य किया जा सके। यह सीटों के राष्ट्रीयकरण की कोटि में आएगा जिसे टी एम ए पाई (ऊपर) मामले में विशेष रूप से अस्वीकार किया गया है। अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थाओं में राज्य सीटों के कोटे को थोपना या उपलब्ध सीटों पर राज्य की आरक्षण नीति को लागू करना ऐसे कार्य हैं जिनसे अनुच्छेद 30(1) में अधिष्ठापित अधिकार का गम्भीर अतिक्रमण होता है। सीटों का

ऐसा विनियोजन संविधान के अनुच्छेद 30(1) के अर्थ के अधीन विनियामक उपाय या एक औचित्यपूर्ण प्रतिबंध भी नहीं माना जा सकता।